ईश्वर का चिन्तन कैसे करें

व्याख्याता

अनन्त श्रीस्वामी अखण्डानन्द जी सरस्वती

३३ वें आराधन महोत्सव के पावन पर्व पर

त्वदीय वस्तु गोविन्द!
तुभ्यमेव समर्पयेत्।

श्रीअशोक मोदी, दिल्ली के
सौजन्य से

आनन्द प्रस्तुति ऑडियो विजुअल सेंटर
आनन्द वृन्दावन, वृन्दावन
द्वारा
वितरणार्थ प्रकाशित

मुद्रण-संयोजन
श्रीहरिनाम प्रेस, लोई बाजार, वृन्दावन-281121
दूरध्वनि : 7500987654

॥ ॐ ॥

शुभाशंसा

पिछले कुछ वर्षों की भाँति इस वर्ष भी परम पूज्य महाराजश्री के 'आराधन-महोत्सव' पर पूज्यश्री द्वारा 'ईश्वर का चिन्तन कैसे करें!' यह लघु प्रसादी पुस्तिका-वितरणार्थ, श्री अशोक मोदी, दिल्ली के सौजन्य से प्रकाशित की गई है।

मैं आशा करता हूँ कि सुधी पाठकों को इस लेख को पढ़कर अपने 'ईश्वर चिन्तन' की साधना में दिशा प्राप्त होगी।

विनयावनत
सच्चिदानन्द

'स्वस्त्ययन'

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं
धिय जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे
रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥

– ऋग्वेद 1.89.5

'उस ईश्वर को जो चराचर जगत् का स्वामी एवं रक्षक है, सम्पूर्ण बुद्धियों में आनन्द का उल्लास करता रहता है, अपने त्राण-कल्याण के लिए हम उसका आवाहन करते हैं। जिस प्रकार पूषा अर्थात् सूर्य देवता हमारे ज्ञान एवं धन की वृद्धि करते हैं, वैसे ही ईश्वर निर्विघ्न रूप से हमारी रक्षा करें और हमारे लिए अमर कल्याण के दाता हों!'

ईश्वर का चिन्तन कैसे करें !

भक्त्या पुमाञ्जातविरागऐन्द्रियाद्
दृष्टश्रुतान्मद्रचनानुचिन्तया।
चित्तस्य यत्तो ग्रहणे योगयुक्तो
यतिष्यते ऋजुभिर्योगमार्गैः।।

– 3.25.26

"भक्ति होने पर पुरुष को देखे-सुने सब ऐन्द्रिक भोगों में वैराग्य हो जाता है। तब वह चित्त को एकाग्र करने के प्रयत्न में लगता है और बराबर मेरी रचना के चिन्तन-जैसे सरल योगमार्गों से प्रयत्न करता है।"

मद्रचनानुचिन्तया – भगवान् की रचना-उनका शिल्पनैपुण्य देखो। सूर्य ऐसा दीपक है कि यदि वह केवल दो फुट पृथिवी के और समीप होता तो पृथिवी जल जाती।

यदि चन्द्रमा दो फुट और पास होता तो समुद्र का ज्वार पृथिवी को डुबा देता। कितना अद्‌भुत गणित है सृष्टिकर्ता का।

आपके नेत्रों के सम्मुख सृष्टि है। इसकी अद्‌भुत रचना पर आपका ध्यान जाता है? ऐसी कोई संसार की वस्तु है जो आपके प्रिय की बनायी न हो?

एक बार एक सज्जन अपनी पुत्री के साथ गुरुनानक के समीप गये। गुरु साहब एकटक उस लड़की को देखने लगे तो पिता से रहा नहीं गया। वह बोला-आप इसमें क्या देखते हैं?

गुरु- कर्ता की कारीगरी देखता हूँ।

यह भक्त की दृष्टि है कि लड़की नहीं देखते, कर्ता की कारीगरी देखते हैं।

मद्रचनानुचिन्तया- मम रचनाया अनुचिन्ता यस्यां तादृश्या भक्त्या, मेरी रचना का अनुचिन्तन जिसमें है, उस भक्त की दृष्टि से सृष्टिको देखो।

एक महात्मा लखनऊ में रहते थे। उनके समीप एक सज्जन अपने बगीचे के फूलों का गुलदस्ता लेकर आये। वे महात्मा से यह पूछने आये थे कि- घरद्वार सम्हालें या छोड़ दें। महात्मा देखने में तल्लीन हो गये। उन सज्जन ने थोड़ी देर प्रतीक्षा की। महात्मा को अपनी ओर ध्यान न देते देखकर बोले- 'गुलदस्ता आप देख रहे हैं, यह बड़ी कृपा, किन्तु मुझे तो आप भूल ही गये।'

महात्मा - फेंक दूँ इसे?

वे घबड़ाकर बोले - नहीं-नहीं। बड़े प्रेम से मैंने इसे बनाया है।

महात्मा - तब इसी को देखूँ?

वे- नहीं, मेरी ओर भी देखिये।

महात्मा - तुम्हारे प्रश्न का यही उत्तर है। यह संसार ईश्वर ने बड़े प्रेम से बनाया है। अत: इसकी ओर भी देखो और इसके बनाने वाले की ओर भी देखो।

पृथिवी देखकर आपको स्मरण आता है कि इसे वराह भगवान् ने स्थापित किया है? इसी धरती पर श्रीरघुनाथ धूसर धूरि भरे तन आये और यही पृथिवी है जिसपर गोपाल घुटनों चलता था। समुद्र देखकर आपको शेषशायी का स्मरण आता है? यह भगवान् की ससुराल है। भगवान् इसमें शेषशय्या पर सोते हैं। सूर्य-मण्डल में भगवान् हैं। चन्द्र-मण्डल में भगवान् हैं। वायु विराट्-पुरुष का श्वास है। शरीर में वायु लगने पर कभी स्मरण आता है कि हमारे इतने समीप भगवान् का मुख है? ये बातें मन में आने लगे, तब समझो कि भक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। सृष्टि के कर्ता

कारीगर का हाथ सर्वत्र दीखना चाहिए। उसे देखने, उससे मिलने की उत्कण्ठा होनी चाहिए।

हे देव हे दयित हे भुवनैकबन्धो।
हे कृष्ण हे चपल हे करुणैकसिन्धो।
हे नाथ हे रमण हे नयनाभिराम।
हा हा कदानुभवितासि पदं दृशोर्मे।।

वह रसमयी, मधुमयी, लास्यमयी श्याममूर्ति हमारे नेत्रों के सम्मुख कब आयेगी? जीवन में वह क्षण कब आयेगा? हे कृष्ण! हे चपल! हे करुणासिन्धु! हे स्वामी! हे प्रियतम! हे त्रिभुवनबन्धु! हे परमसुन्दर! कब तुम मेरे नेत्रों के सम्मुख आओगे!

यह उत्कण्ठा - प्यास जगे प्राणों में। आप विश्वास कीजिये कि ईश्वर है। सच्चा है और ईश्वर का दर्शन इन्हीं नेत्रों से होता है। जितना सत्य यह जगत् है, उससे अधिक सत्य परमात्मा है।

डाक्टर कहते हैं- हम हृदय बदल सकते हैं। जब आप हृदय बदलते हो तो क्या उस व्यक्ति की स्मृतियाँ और भावनाएँ बदल जाती हैं? ऐसा तो नहीं है। यह तो एक मांस-खण्ड है, जिसे आप बदलते हो। हृदय हम कहते हैं भावनाओं के आधार को। वह बदला नहीं जाता।

मद्रचनानुचिन्तया- सृष्टि के रूप में यह परमात्मा का कौशल सामने है। एक-एक वस्तु में उनकी विलक्षण निपुणता है। आप नल के जल का टैक्स देते हो, पंखे के चलाने का टैक्स देते हो। किन्तु वर्षा के जल का टैक्स लगता है? श्वास लेने की वायु पर कोई कर है?

यावज्जीवं त्रयो वन्द्या वेदान्तो गुरुरीश्वरः। वेदान्ती को भी यावज्जीवन वेदान्त, गुरु तथा ईश्वर की सेवा करनी चाहिए; क्योंकि ईश्वर ने अंतःकरण शुद्ध किया, गुरु ने हमारे जीवन का निर्माण किया, वेदान्त शास्त्र से ज्ञान प्राप्त

हुआ। इनके प्रति कृतघ्न हो जाओगे तो ज्ञान प्रतिबद्ध हो जायेगा। अतः इनके प्रति कृतज्ञ बने रहना चाहिए।

अन्न, वस्त्र, गौ आदि वस्तुओं के देने की क्रिया जब धर्म और वस्तु के संयोग से संपन्न होती है, तब उससे मन पवित्र होता है। जब किसी को कुछ देकर बदले में कुछ लाभ इसी लोक में चाहते हैं, तब धर्म विकृत हो जाता है। जैसे श्राद्ध में अपने रसोईये को खिलाकर उसे रुपया, धोती दें और उससे सेवा चाहें। वस्तु, क्रिया, विधि, सद्भाव तथा संकल्प के सम्बन्ध से धर्म होता है। मीठे शब्द का दान भी धर्म है।

परमात्मा तथा जगत् के तत्त्व का विधिवत् विचार करने से ज्ञान होता है। मनमाने ढंग से विचार करने से ज्ञान नहीं होता। योग में वस्तु की आवश्यकता नहीं, क्रिया की आवश्यकता नहीं, सङ्कल्प की आवश्यकता नहीं और विचार की भी आवश्यकता नहीं। बस मन को रोक दो। इन सबसे

भक्ति विलक्षण है। इसमें न ब्रह्मविचार है, न मनोविरोध है, न वस्तु देना और न क्रिया करना। भक्ति प्रेमात्मिका वृत्ति है। भक्ति यह है कि एक-एक पदार्थ में, क्रिया में भगवान् का स्मरण हो।

एक महात्मा को किसी ने केला दिया। उन्होंने केले को छीला, बस वे तो केला खाना भूल ही गये। उनके नेत्रों से अश्रु-प्रवाह चलने लगा। वे केले को ही देखते रह गये। देने वाले से पूछा - केले के भीतर इतना उत्तम हलवा किसने रखा? किसने छिलके से उसकी ऐसी रक्षा की कि मक्खी, मच्छर का मुँह वहाँ नहीं पहुँच सका? वह मुझसे बहुत प्रेम करता होगा?

आराममस्य पश्यन्ति न तं पश्यति कश्चन - श्रुति

उसके सृष्टिरूप बगीचे को लोग देखते हैं; किन्तु उसे कोई नहीं देखता। **रचनानुपपत्तेश्चनानुमानम्** (ब्रह्मसूत्र) कभी भी अज्ञातरूप से अपने आप इतनी उपयुक्त, समझदारी

से बनी रचना नहीं हो सकती। लेकिन अनुमान से जगत्कर्ता नहीं जाना जाता। अनजान रूप से प्रकृति बदलती रहती है और स्वयं सब बन जाता है- ऐसा नहीं हो सकता।

खाया भोजन कैसे पचता है? उससे बना रस शरीर कैसे चूस लेता है? श्वास कैसे चलती है? यह शरीर ही अद्‌भुत यंत्र है। हमारे खाये अन्न से केवल रक्त, मांस या शक्ति ही नहीं बनती, उससे मन भी बनता है, बुद्धि बनती है। अन्न का बुद्धि बन जाना क्या अपने-आप सम्भव है? विज्ञान अभी तक रक्त भी नहीं बना सका है। वस्तुत: विज्ञान केवल आकृति बनाता है, धातु नहीं। आकाश, वायु आदि विज्ञान नहीं बनाता। जो यह सब बनाता है, उस रचनाकार का चिन्तन करो।

हम प्रतिदिन सो जाते हैं तो जगाता कौन है? नींद कैसे आती है? कौन निद्रा भेजता है? संसार में किसी वस्तु को देखो - मिट्टी, पानी, अग्नि, वायु, पशु-पक्षी, वृक्ष,

लता – सबमें अद्‌भुत कौशल है। आपके पाँच पुत्र हों और उनके पाँच-पाँच सन्तान हों। यह क्रम सौ पीढ़ी चले तो आपका ही नाम ब्रह्मा हो जायेगा। सृष्टि में यह जो अरबों प्राणी हैं, सृष्टि में वृद्धि का यह बीज किसने डाला ? आम कितनी पीढ़ी से चला आ रहा है। एक फूल सड़ता है तो कितने कीड़े बन जाते हैं। इस प्रकार सृष्टि में सर्वत्र भगवान् का हाथ देखो।

ऐसा करना सरल न लगे तो दूसरे क्रम से चिन्तन का स्वभाव बनाओ। मान लो कि आप हाथ में एक केला लेते हो। आपको केले को देखकर यह कथा स्मरण आनी चाहिए – श्रीकृष्णचन्द्र जब पाण्डवों के संधिदूत बनकर हस्तिनापुर गये तो दुर्योधन ने उनके स्वागत के लिए महल सजाया था। बड़ी तैयारी की थी। श्रीकृष्ण ने दो टूक कह दिया–

सम्प्रीति भोज्यान्यन्नान्यापद्भोज्यानि वा पुनः।
न च त्वं प्रीयसे राजन् चैवापद्गता वयम् ।।

दुर्योधन जी ! प्रेम से कोई खिलाये तो खा लें या हमें भोजन न मिलता हो – हम भूखे हों तो जो दे, उसका खा लें। किन्तु तुम तो प्रेम से खिलाते नहीं; घूस दे रहे हो और हम भूखे नहीं हैं, अतः तुम्हारे घर खाने नहीं जायेंगे।

दुर्योधन के आमंत्रण देने पर भी नहीं गये उसके घर और विदुर जी के घर स्वयं पहुँच गये। विदुर-पत्नी को घर में कुछ नहीं मिला तो केला खिलाने लगीं। इतना प्रेम आवेश कि केले का गूदा फेंकती जायें और छिलका देती जायें। श्रीकृष्ण वह केले का छिलका खाते थे। आपके हाथ में जो केला है यह भी तो उसी केले के वंश में है- यह स्मरण करें।

संस्कृत में एक ग्रन्थ है – **सुश्लोकलाघवम्,** उसके ग्रंथकर्ता से किसी ने पूछा- आम्र इतना मीठा क्यों है? ग्रन्थकर्ता बोले- **'सोऽयं रामपदप्रसङ्ग-महिमा लोके**

समुज्जृम्भते' - यह आम्र नाम में जो राम नाम के अक्षर आ म र र आ म हैं, इनके आने की महिमा है।

मेघ देख कर आपको मेघश्याम और कमल देखकर कमललोचन का स्मरण होना चाहिए। एक बौद्ध ग्रन्थ में एक प्रश्न उठाया है– पशु में भी मन होता है और मनुष्य में भी मन होता है। जब मनायतन दोनों में है, तब दोनों के शरीर में एवं मन में अंतर क्यों है? मन में तीन बातें होती हैं द्वेष, लोभ और मोह। जो इनको कम नहीं करता, उसका मन दुर्बल एवं चञ्चल हो जाता है। उसका मन निपुण भी नहीं होता। लोभी, मोही, द्वेषी लोग बेईमान, पक्षपाती और निष्ठुर होते हैं। उनमें स्वयं को रोकने की शक्ति नहीं होती। वह एक स्थान पर टिक नहीं सकता। उसमें सूक्ष्म विचारों का उदय नहीं हो सकता। ऐसा मनुष्य अगले जन्म में पशु होगा; क्योंकि पशु के लिए मन को रोकना आवश्यक नहीं। जहाँ आहार दीखा, टूट पड़े। क्रोध आ गया, लड़

पड़े। चित्त में लोभ, द्वेष, मोह की प्रधानता से ही तो वर्तमान जीवन में भी मनुष्य पशु-तुल्य ही है। जो लोभ, मोह, द्वेष को रोकते हैं, उनका मन सबल बनता है। वह स्थिर तथा परमार्थ-विचार में पटु हो जाता है। जिसके मन में लोभ, मोह, द्वेष अधिक है, वह ईश्वर का भक्त नहीं है। मनुष्य जब अलोभ, अमोह, अद्वेष का अभ्यास करता है, तब उसके मन में आत्मबल, एकाग्रता तथा वस्तु को समझने का सामर्थ्य आता है। हम मानवता से पशुता की ओर जा रहे हैं। मन पशु बन चुका तो बाहरी देह मनुष्य बना कब तक घूमेगा? आप वस्तुतः मनुष्य बनना चाहते हैं तो द्वेष, मोह, लोभ छोड़कर मन को ईश्वर के चिन्तन में लगाइये। इससे मन एकाग्र, बलवान् तथा विचार-समर्थ होगा।

मद्रचनानुचिन्तया- ऐसी कोई क्रिया नहीं होती, जिसमें भगवान् की दया, करुणा, वात्सल्य न हो। मनुष्य की बुद्धि दूसरी ओर लगी रहती है, अतः इस लीला में

भगवान् की कृपा समझ में नहीं आती। कभी-कभी किसी से वियोग होने में लाभ होता है। कभी पैसा खोने में भी लाभ होता है। कभी-कभी किसी के मरने में भी लाभ होता है। संन्यासी होना त्यागमय जीवन - अकेला जीवन बिताना, इसमें भी भगवान् की कृपा है।

एकबार मैं घर से भागकर चित्रकूट जा रहा था। मार्ग में एक परिचित मिले। बोले- अकेले जा रहे हो या कोई साथ है?

मैंने कहा - मैं हूँ और मेरा भगवान् है। जब दूसरे साथ होते हैं, तब भगवान् का पता नहीं लगता। हम अकेले होते हैं तब भगवान् का पता चलता है कि वह हमारी कैसे सहायता करता है। मुझे ऐसे स्थान पर रोटी मिली है, जहाँ रोटी मिलने की कोई आशा नहीं थी। भूखे थे तो मार्ग में चलते-चलते किसी ने बुलाकर खिला दिया। जिसने आपको मुख दिया, शरीर दिया, पेट दिया, उसी ने रोटी दी है।

आपकी एक-एक चेष्टा भगवान् की दृष्टि में है। जीवन में जो भी घटना घटे, उसमें भगवान् का हाथ-भगवान् की करुणा देखो-

तत्तेऽनुकम्पां सुसमीक्षमाणो
भुञ्जान एवात्मकृतं विपाकम्।
हृद्वाग्वपुर्भिर्विदधन्नमस्ते
जीवेत यो मुक्तिपदे स दायभाक्।।

भगवान् की कृपा को भली प्रकार देखता हुआ, अपने शुभाशुभ कर्म फल को भोगते हुए, हृदय, वाणी, शरीर से जो भगवान् के सम्मुख नत रहता है, मुक्तिपद का वह उत्तराधिकारी है।

जीवन की किसी घटना का कर्ता कोई मनुष्य नहीं है, ईश्वर है। अत: जब तुम किसी काम करने वाले को गाली देते हो तो उस काम करने वाले को गाली नहीं देते, गाली सीधे ईश्वर को जाती है। एक बार किसी बड़े पण्डित ने

कोई बात कही। बात मुझे जँची नहीं। मैंने कह दिया- किस मूर्ख ने ऐसा कहा है? उस पण्डित जी ने मेरे गुरूजी का नाम लेकर कहा- उन्होंने कहा है।

मैं- तब तो ठीक है।

पण्डित जी - पहले गाली दे दी, अब कहते हो - ठीक कहा है। इसी प्रकार हम कार्यों को दूसरों का किया मानकर गाली देते हैं। जैसे खीर खिलाने वाला चटनी, नमक, मिर्च भी परसता है कि इन्हें बीच-बीच में खाने से खीर का स्वाद बढ़ जायेगा, वैसे ही भगवान् बीच-बीच में अपमान, दु:ख, अभाव, रोग भेजते हैं। इन्हें हमारे अभिमान को तोड़ने के लिए भेजते हैं।

जन्माष्टमी भगवान् का अवतार-काल है। शरद-पूर्णिमा रास का दिन है। इसी प्रकार रामनवमी, शिवरात्रि आदि भगवत्स्मरण कराने वाले काल हैं। प्रत्येक महीने में एकादशी, द्वादशी, प्रदोष आदि आते हैं। अयोध्या,

वृन्दावन, वाराणसी आदि देश भगवत्स्मरण कराने वाले हैं। संत ज्ञानेश्वर, एकनाथ, नामदेव, तुकाराम, नरसी मेहता, सूरदास, तुलसीदास, गुरुनानक, आल्वार, नायनार आदि संतों को भगवान् ने हमारे कल्याण के लिए कृपा करके पृथिवी पर भेजा। भगवान् ने हमें हृदय दिया कि उनसे प्रेम करें। बुद्धि दी कि उनके विषय में सोचें।

आपको एक सूची बनानी चाहिए कि प्रतिदिन आप कितनी देर अपने और अपने परिवार के लिए काम करने में लगाते हैं? कितना समय समाज तथा दूसरों को देते हैं तथा कितना समय ईश्वर के लिए लगाते हैं? यदि आठ घण्टे अपने परिवार के लिए लगाते हैं तो दो घण्टे समाज के लिए तथा दो घण्टे ईश्वर के लिए भी लगाइये। सारा जीवन स्वार्थ के लिए ही लग जाये, यह कैसा जीवन है?

भजन हाथ से, जीभ से ही नहीं, पाँव से भी सम्भव है। एक अच्छे महात्मा हैं। वे बोलते नहीं, किन्तु सब समय

बैठे तो रह नहीं सकते। उन्होंने पाँच – सात गज का गोवर्धन बना लिया है। उसकी 108 परिक्रमा करते हैं। यह पैर से भजन करना ही तो है। इससे घूमना भी हुआ जिससे स्वास्थ्य ठीक रहे और भजन भी हुआ। क्रिया कुछ करो, किन्तु हृदय में भाव हो कि भगवान् के लिए कर रहे हो, तो वह भजन है। हाथ से भगवान् के लिए कुछ करो। मुख से जप, पाठ, कथा करो। माला चढ़ाओ या पूजा–परिक्रमा करो। जिसने तुम्हें शरीर, हृदय, बुद्धि दी, परिवार दिया, खुशियाँ दीं, उसके लिए जीवन में कुछ न किया जाय, यह तो भारी कृतघ्नता है। तुम्हारे पास बेटा–बेटी के लिए है, पति या पत्नि के लिए है, शरीर के लिए है, परन्तु ईश्वर के लिए कुछ नहीं है? जब हर बात में भगवत्कृपा दीखती है, तब भक्ति होती है। एक है जो रात–दिन तुम्हारी रक्षा के लिए सावधान रहता है। उस ईश्वर को देखो। पैसे के स्थान पर ईश्वर को चाहो। पैसा तो प्रारब्ध से मिलता है।

आपका उत्तराधिकारी चाहता है कि आप जल्दी से जल्दी चाभी उसे दे दें। वह कहता है – अब ये बुड्ढे हो गये, इन्हें अब भजन करना चाहिए। अब ये काम-धन्धे में क्यों व्यस्त रहते हैं? आप जिससे सबसे अधिक प्यार करते हैं, जिसे आप सब कुछ दे जाना चाहते हैं, वह चाहता है – आप शीघ्र दे जाएँ। आप मोह में फँसे हैं। संसार के विषय नाशवान् हैं। ये एक दिन अवश्य छूटेंगे। एक सज्जन समाचार पत्र पढ़ रहे थे, बैठे-बैठे ही मर गये। एक स्वस्थ व्यक्ति काम कर रहे थे, सहसा नेत्र-ज्योति चली गयी। न विषयों का हिसाब है कि वे कब तक रहेंगे और न इन्द्रियों का ठीक है कि वे कब तक काम करेंगी। न मन का पता है कि जो आज प्रिय लगता है, वह कल भी प्रिय रहेगा या नहीं? शरीर का भी ठीक नहीं कि कब तक रहेगा? यह भोगायतन देह नदी के कगार पर बैठा है। आग लग गयी तब कुआँ खोदने लगना समझदारी नहीं है। पहले से कुआँ होगा तब आग बुझेगी। अतः जीवन में पहले से तैयारी करो।

भक्ति के दो पुत्र हैं – ज्ञान और वैराग्य। जितनी–जितनी भक्ति मन में आयेगी, संसार से उतना वैराग्य होगा और भगवान् के विषय में उतना ज्ञान होगा।

आप घड़ी को वाटरप्रूफ रखते हैं, शॉकप्रूफ रखते हैं कि कभी भीग जाय या हाथ से गिर जाय तो खराब न हो, किन्तु अपने हृदय और मष्तिष्क को सुरक्षित बनाकर नहीं रखते ? उसकी यही सुरक्षा है कि उसे भगवान् के चरणों में लगा दो। यदि कहीं संसार में हृदय लगाओगे तो दु:खी होगे। अत: ईश्वर का चिन्तन करो।

तमसो मा ज्योतिर्गमय

सत्य सर्वदा सरल होता है। उसमें दावपेंच नहीं होते। चेष्टा सत्य की प्राप्ति के लिए नहीं, असत्य के त्याग के लिए करनी चाहिए।

धर्म क्रिया प्रधान है इसलिए उसके लिए स्थूल शरीर की अपेक्षा है। धर्म अधर्म का निवर्तक है।

उपासना भाव प्रधान है, इष्टाकार-वृत्ति है। इसमें सूक्ष्म शरीर की अपेक्षा है। यह अनेकाकारता को निवृत्त करती है।

योग निराकार स्थित्यात्मक है। अत: कारण शरीर प्रधान है। यह विकल्प का निवर्तक है।

हठयोग में क्रियालम्बन है। मंत्रयोग में शब्दालम्बन है। लययोग में इदंरूप प्रतीकालम्बन और राजयोग में अहंरूपालम्बन है।

सेवा में दु:ख तब होता है जब वह ज्ञानशून्य हो, विवेकरहित हो तथा संसार के पदार्थो में राग हो।

परमात्मा के साक्षात्कार के लिए ज्ञान अनिवार्य है। परन्तु अंत:करण की शुद्धि के बिना ज्ञान नहीं हो सकता। अंत:करण की शुद्धि के लिए सबसे बड़ी औषध भक्तिरूप रसायन है। अंत:करण शुद्धि के लिए एक आलंबन की आवश्यकता है।

भक्ति का संयोग यदि भगवान् के साथ ठीक-ठीक होगा तो पुत्ररूप में ज्ञान का प्रकाश और वैराग्य की निर्मलता एक साथ प्राप्त होंगे। वैराग्य अर्थात्‌ चित्त में राग-द्वेषका न होना। अंत:करण के संकल्परूप मन की शुद्धि भगवान् के स्मरण से होती है। स्मरण से राग-द्वेष दोनों क्षीण होंगे।

ज्ञान (विचार) तत्त्व शोधन के लिए प्रयोज्य है और भक्ति जीवन-शोधन के लिए।

कोई भी संसार नहीं चाहता। वह चाहता है शाश्वत सुख। शाश्वत सुख संसार में नहीं है; वह तो ईश्वररूप है। इसलिए सर्वत्र, सर्वदा, सर्वथा और सब में परिपूर्ण सुख का अभिलाषी ईश्वर की ही उपासना करता है।

भक्ति क्या है? सर्वरूप में विराजमान परमात्मा की सेवा और इसकी पूर्णता है – सर्वत्र भगवद्‌भाव।

पूतना का अंत:करण शुद्ध है। वह भगवान् की ओर चलती है। स्तन में विष लगाकर– अपने दोषों को प्रकट करके भगवान् के पास आती है। परन्तु उसके भीतर है अमृततुल्य दूध। भगवान् उसके दोषों को पचा लेते हैं और दूध पी जाते हैं। उसे माता की गति देते हैं। तात्पर्य यह है कि तुम जैसे हो, वैसे ही भगवान् की ओर चलो, उनसे मिलो। भगवान् भी जैसे हैं, वैसे ही तुमसे मिल जायेंगे। दोषों से डरो मत।

एक महात्मा गये भिक्षा माँगने। बुढ़िया ने नाराज होकर घर लीपने–पोतने का पोतना फेंककर मारा। महात्मा उसे उठाकर कुटिया पर ले आये। धो–सुखाकर बत्ती बनायी और भगवान् के लिये दीपक में प्रयुक्त किया। भगवान् की कृपा हुई। बुढ़िया को पोता हुआ।

पूतना भी भगवान् को दूध पिलाने के लिए गयी, परन्तु बाहर से लपेटा विष। भगवान् ने पोतने की तरह उस जहर को भी स्वीकार कर लिया। भगवान् की कृपा से पूतना को मातृत्व मिला। महात्मा और भगवान् की इस महिमा को स्वीकार कर उनकी ओर चलो।

जीवनोपयोगी सूत्र

दूसरे की जानकारी ही दु:ख है। हम अंग्रेजी नहीं पहचानते। A, B अभीतक जानने की कोशिश नहीं की, प्रयत्न करता तो जान लेता। गिनती में भी वही बात है। ६ और ९ में गलती होती है। मैं छोटा था तब अंग्रेजी बोलने वालों की बस्ती में जाता था। वहाँ के लड़के हमें देखकर अंग्रेजी में गालियाँ देते थे; किन्तु हम तो कुछ समझते न थे! एक अंग्रेज अफसर ने कहा, 'ये लड़के तो बड़े असभ्य हैं, वे तुम्हें गाली देते हैं।' यह जाना तब दु:ख हुआ। जीवन में दु:ख बाहर से नहीं आता, भीतर से निकलता है। दूसरे का दोष जानना दु:ख है। अभिमान करना कि मैं बड़ा विद्वान् और दूसरों में दोष देखना; यह विद्वान् होकर दु:ख निकलता है। एक व्यक्ति ने पाँच रुपया खोया और दु:खी हुआ। मैंने कहा– चला गया? कुछ आया तो नहीं? अब दु:ख बुलाना क्यों? जो गया उसे जाने दो। रुपया गया तो गया, दु:ख मन

में क्यों आये ? डाकू पैसा ले जाय और उस डाकू को क्यों घर में बुलाना ? दु:ख मेहमान है।

हमारे गुरु, परम गुरु, परात्पर गुरु किस मार्ग पर चले हैं, वे किस प्रकार साधक को धीरे-धीरे ऊपर उठाकर मार्ग पर चलाते हैं, यह समझ कर हमें भी वैसे ही करना चाहिए।

मैं अट्ठारह-उन्नीस वर्ष की वय में ही संतों के चक्कर में पड़ गया था। मुझे सत्सङ्ग-कुसङ्ग दोनों मिले। अच्छाई-बुराई,ईमानदारी-बेईमानी दोनों हम जानते हैं। ऐसे ही जीवन की धारा बहती रहती है, चक्रवत् घूमती रहती है। हमारे साधन, आचरण पवित्र होने चाहिए।

चिन्तन

परमात्मा का यह संकल्प नहीं है कि सबका उद्धार हो जाये। उसका यह संकल्प है कि जो उसके द्वारा उपदिष्ट मार्गपर चले उसका उद्धार हो जाये; अन्यथा ईश्वर की सृष्टिलीला का लोप हो जायेगा।

सत्य पदार्थ का निरूपण करनेवाला ग्रन्थ ऐतहासिक, भौगोलिक अथवा कर्तृगत महत्त्व से महान् नहीं हुआ करता। उसके कागज, छपाई सफाईका भी उसपर प्रभाव नहीं पड़ता। वह जिस देश में, जिस काल में, जिस व्यक्ति के द्वारा, चाहे जैसे प्रकट होता है, अपने वर्ण्य पदार्थ के कारण महान् होता है। निश्चित रूप से अध्यात्म रामायण आदि ग्रन्थ जनता के शाश्वत उपकारी हैं। हीरा किस समय, किस खान से, किसके द्वारा प्राप्त किया गया, यह मत देखो, उसका सच्चा मूल्याङ्कन करो।

भुशुंडि - चरित्र अत्यन्त प्राचीन है। एक भुशुंडोपनिषत् भी है। योगवासिष्ठ में भुशुंडोपाख्यान है। वक्ता की आकृति, जाति आदि नहीं देखी जाती। उसके द्वारा वर्णित भगवद्-गुणानुवाद से प्रेम करना चाहिए। पक्षिराज गरुड़ पक्षि-चाण्डाल से भगवद्गुणश्रवण करते हैं। आवाज भी सुरीली नहीं। सुन्दर आकृति, उत्तम जाति सुरीली आवाज को छोड़ कर परमात्मा का श्रवण करो।

ईश्वर-आराधन का चमत्कार

विशेष-विशेष प्रयत्न करने पर अमुक-अमुक प्रारब्ध भी मिटाये जा सकते हैं। गोस्वामीजी ने **'भाविहुँ मेंटी सकहिं त्रिपुरारी'** कह कर संकेत किया है। अथर्ववेद में रोग, ग्रह आदि की निवृत्ति के लिए शान्ति के अनेक प्रसङ्ग हैं। पूर्वमीमांसा-शास्त्र की रीति से- पौरुष की ही प्रधानता है, दैव की नहीं। आपने सुना होगा, योगिराज चांगदेव ने चौदह बार मृत्यु को लौटा दिया। मार्कण्डेय ने अपमृत्युपर विजय प्राप्त कर ली। सावित्री ने यमदूतों से सत्यवान् को छीन लिया। बात यह है कि जब दृढ़ विश्वास से भगवदाराधना की जाती है या निष्ठापूर्वक योग या ज्ञान का सम्पादन किया जाता है तब मनोवृत्ति इतनी ठोस हो जाती है कि प्रारब्धजन्य निमित्त भी उसको सुखी-दुःखी करने में समर्थ नहीं होते। आप मानें या न मानें, मैंने अनुभव किया है कि ईश्वर-आराधन मृत्यु को और दुःख को भी अपने पास फटकने नहीं देता।